ईदुल-फ़ित्र किसके लिए?

मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी
अनुवाद
मुहम्मद इलियास हुसैन

अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त कृपालु और दयावान् है।

ईदुल-फ़ित्र की वास्तविकता

धर्म-व्यवस्था में इसका महत्व

कुछ लोग यह विचार बड़े ज़ोर-व-शोर से फैला रहे हैं कि ईद इस्लामी एकता का एक महत्वपूर्ण प्रतीक है। इसलिए सभी मुसलमानों की ईद निश्चित रूप से एक दिन होनी चाहिए। इनमें से कुछ लोग कहते हैं कि सारी दुनिया के मुसलमानों की ईद एक दिन हो और कुछ दूसरे लोग कहते हैं कि पाकिस्तान (या भारत) के सभी मुसलमानों की ईद तो एक ही दिन होनी ज़रूरी है। लेकिन वास्तव में यह विचार और दृष्टिकोण की ग़लती है। दीन (धर्म) से अनभिज्ञता के कारण ऐसी बातें की जा रही हैं और ये बातें ज़्यादातर वे लोग कर रहे हैं, जो रमज़ान के रोज़े तो नहीं रखते, लेकिन ईद के मामले में इस्लामी एकता की उन्हें बड़ी चिन्ता है।

इन लोगों को पहली ग़लत-फ़हमी तो यह हुई है कि ईद इनके विचार में क्रिसमस या होली या दीवाली की तरह कोई त्योहार है या फिर यह कोई राष्ट्रीय उत्सव (क़ौमी जश्न) है, जिसे मुसलमानों की राष्ट्रीय-एकता का प्रतीक बनाया गया है। हालांकि वास्तव में ईद का संबंध एक इबादत (उपासना) से है, जो रमज़ान के आरम्भ से शुरू होती है और रमज़ान की समाप्ति के बाद अल्लाह तआला के शुक्र के तौर पर दो रकअत नमाज़ पढ़कर ख़त्म की जाती है।

शरीअत (धार्मिक विधान) के स्पष्ट आदेशों के अनुसार इस इबादत (उपासना) का आरम्भ उस समय तक नहीं हो सकता, जब तक संतोषप्रद

ढंग से यह मालूम न हो कि रमज़ान का महीना शुरू हो चुका है और उसकी समाप्ति भी उस समय तक नहीं हो सकती जब तक कि ऐसे ही संतोषप्रद तरीक़े से यह मालूम न हो जाए कि रमज़ान समाप्त हो चुका है। क़ुरआन मजीद का स्पष्ट आदेश है :

> "रमज़ान वह महीना है जिसमें क़ुरआन उतारा गया है। ......तो जो कोई तुम में से इस महीने में मौजूद हो, वह इसके रोज़े रखे।" 2:185

यह आयत बिल्कुल स्पष्ट रूप से इस बात का फ़ैसला करती है कि रमज़ान का महीना जब से शुरू हो और जब तक रहे हर मुसलमान को उसके रोज़े रखने चाहिए और इस महीने के रोज़े को पूरा किये बिना किसी ईद का हरगिज़ कोई सवाल पैदा नहीं होता। इस मामले में असल चीज़ मुसलमानों की एकता नहीं है, बल्कि रमज़ान के महीने की समाप्ति है, जिसके बारे में इत्मीनान हासिल कर लेना ईद के लिए अनिवार्य है। अब यह स्पष्ट है कि रमज़ान एक क़मरी महीना (चन्द्रमास) है, जो चांद को देखने पर निर्भर करता है और इसके बारे में नबी (सल्ल०) का स्पष्ट आदेश मौजूद है—"चांद देखकर रोज़ा रखो और चांद देखकर ही रोज़े ख़त्म करो। लेकिन आसमान साफ़ न हो (यानी चांद दिखाई न पड़े) तो तीस रोज़ों की गिनती पूरी करो, सिवाय इसके कि दो सच्चे और विश्वसनीय गवाह यह गवाही दें कि उन्होंने चांद देखा है।" हुज़ूर (सल्ल०) ने इस आदेश में दो बातें स्पष्ट रूप से निर्धारित की हैं—एक यह कि 'चांद देखने की गवाही' उस समय आवश्यक होगी, जबकि आसमान साफ़ न हो। दूसरे यह कि इस स्थिति में ख़बर पर नहीं, बल्कि दो सच्चे और न्यायप्रिय गवाहों की गवाही पर चांद देखने का फ़ैसला किया जाएगा और गवाही के बारे में सब जानते हैं कि वह तार या

टेलीफ़ोन या रेडियो पर नहीं हो सकती। इसके लिए गवाहों का सामने मौजूद होना ज़रूरी है। आप किसी अदालत को टेलीफोन पर गवाही दे कर देखें। आपको ख़ुद मालूम हो जाएगा कि यह गवाही स्वीकार करने योग्य है कि नहीं। सवाल यह है कि जिस 'टेलीफ़ोनी गवाही' को दुनिया की कोई अदालत नहीं मान सकती आख़िर हम से क्यों चाहा जाता है कि एक महत्वपूर्ण शरई (धार्मिक) मामले में इस पर विश्वास कर लें, जिस पर करोड़ों मुसलमानों के रोज़े टूटने या क़ायम रहने की बात निर्भर है।

जो लोग यह कहते हैं कि सारी दुनिया के मुसलमानों की ईद एक दिन होनी चाहिए, वे तो बिल्कुल ही व्यर्थ बात कहते हैं, क्योंकि सारी दुनिया में निश्चित रूप से और एक ही दिन चांद देख लेना संभव नहीं है। रहा किसी देश या किसी बड़े इलाक़े में सब मुसलमानों की एक ईद होने का मसला, तो शरीअत ने इसको भी अनिवार्य नहीं किया है। यह अगर हो सके और किसी देश में शरई क़ानून (धार्मिक विधान) के मुताबिक़ नया चांद देखने की गवाही और उसके एलान का प्रबंध कर दिया जाय तो इसको अपनाने में कोई हर्ज नहीं है, मगर शरीअत की यह मांग हरगिज़ नहीं है कि ज़रूर ऐसा ही होना चाहिए और न शरीअत की नज़र में यह कोई बुराई है कि विभिन्न इलाक़ों की ईद अलग-अलग दिनों में हो। ख़ुदा का दीन (धर्म) सभी इन्सानों के लिए है और हर ज़माने के लिए है । आज आप रेडियो की मौजूदगी के आधार पर ये बातें कर रहे हैं कि सबकी ईद एक दिन होनी चाहिए। परन्तु आज से साठ-सत्तर साल पहले तक पूरे उपमहाद्वीप की बात तो छोड़िए इसके किसी एक राज्य में भी यह संभव नहीं था कि उन्तीस रमज़ान को ईद का चांद देखे जाने की सूचना सब मुसलमानों तक पहुंच

जाती। अगर शरीअत ने ईद की एकता को अनिवार्य कर दिया होता, तो पिछली सदियों में मुसलमान इस हुक्म पर आख़िर कैसे अमल कर सकते थे ? फिर आज भी इसको अनिवार्य करके ईद की यह एकता क़ायम करना व्यवहारतः संभव नहीं है। मुसलमान सिर्फ़ बड़े शहरों और क़स्बों में ही नहीं रहते, दूर-दराज़ देहात में भी रहते हैं और बहुत से मुसलमान जंगलों और पहाड़ों में भी बसे हुए हैं। ईद की एकता को एक अनिवार्य शरई हुक्म बनाने का अर्थ यह है कि मुसलमान होने के लिए देश में केवल एक रेडियो-स्टेशन का होना ही ज़रूरी न हो, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति के पास या हर घर के लोगों के पास या मुसलमानों की हर छोटी-से-छोटी बस्ती में एक रेडियो सेट या एक ट्रांज़िस्टर भी ज़रूर हो, वरना वे अपने शरई कर्तव्य पूरे नहीं कर सकेंगे। क्या ये उपकरण अब दीन (धर्म) का एक अनिवार्य अंग क़रार पायेंगे ? ख़ुदा की शरीअत ने तो ऐसे नियम निर्धारित किए हैं, जिनसे हर मुसलमान के लिए हर हालत में धार्मिक कर्तव्य पूरा करना संभव होता है। उसने नमाज़ का समय घड़ियों के हिसाब से निर्धारित नहीं किया कि घड़ी हर मुसलमान के लिए उसके धर्म का एक अंग बन जाए, बल्कि उसने सूरज के निकलने-डूबने और ढलने जैसे विश्वव्यापी दृश्यों को नमाज़ के वक़्तों की निशानी बनाया, जिन्हें हर शख़्स हर जगह देख सकता है। इसी तरह उसने रोज़े शुरू और ख़त्म करने के लिए भी रमज़ान और शव्वाल महीनों के चांद के देखने को 'पहचान' क़रार दिया है, जो सम्पूर्ण संसार में देखा जा सकता है और हर मुसलमान हर जगह चांद देखकर मालूम कर सकता है कि अब रमज़ान शुरू हुआ और अब ख़त्म हो गया। अगर वह इसकी बुनियाद जंत्री के हिसाब को क़रार देता, तो इसके मायने ये होते कि हर मुसलमान के लिए ख़गोलशास्त्र और ज्योतिषशास्त्र

का ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य हो जाता या जंत्री उसके धर्म का एक अंग बन जाती, जिसे पास रखे बिना वह धार्मिक कर्तव्यों को पूरा नहीं कर सकता और अगर वह यह हुक्म देता कि एक जगह के चांद देखने से सारी दुनिया में या पूरी धरती के एक-एक देश में रोज़े शुरू और ख़त्म करना फ़र्ज है, तो संचार के आधुनिक संसाधनों के आविष्कार से पहले तो मुसलमान इस दीन पर अमल कर ही नहीं सकते थे। रहा इनके आविष्कार के बाद का युग तो इसमें भी मुसलमानों पर यह मुसीबत आ पड़ती कि चाहे उन्हें रोटी और कपड़ा मिले या न मिले, मगर वे मुसलमान रहना चाहें तो उनके पास एक ट्रांज़िस्टर ज़रूर हो।

ईद की मुबारकबाद के वास्तविक हक़दार कौन हैं ?

सज्जनो! इस समस्या के आवश्यक स्पष्टीकरण के बाद अब मैं आप को और अपने सभी भाइयों को ईद की मुबारकबाद देता हूं। ईद की मुबारकबाद के असली हक़दार वे लोग हैं, जिन्होंने रमज़ान के मुबारक महीने में रोज़े रखे, क़ुरआन मजीद की हिदायत से ज़्यादा-से ज़्यादा फ़ायदा उठाने की फ़िक्र की, उसको पढ़ा, समझा, उससे रहनुमाई हासिल करने की कोशिश की और तक़्वा(परहेज़गारी) की उस तर्बियत का फ़ायदा उठाया, जो रमज़ान का मुबारक महीना एक मोमिन को देता है। क़ुरआन मजीद में रमज़ान के रोज़े के दो ही मक़्सद बयान किये गये हैं एक यह कि उनसे मुसलमानों में तक़्वा (परहेज़गारी) पैदा हो–

> "तुम पर रोज़े अनिवार्य किए गए, जिस तरह तुमसे पहले लोगों पर अनिवार्य किए गए थे, ताकि तुममें तक़्वा (परहेज़गारी) पैदा हो।" –2:183

दूसरे यह कि मुसलमान उस नेमत (उपहार) का शुक्र अदा करें जो

अल्लाह तआला ने रमज़ान में क़ुरआन मजीद अवतरित करके उनको प्रदान की है–

"ताकि तुम अल्लाह की बड़ाई करो, इस बात पर कि उसने तुम्हें हिदायत दी, ताकि तुम कृतज्ञ बनो।"

–2:185

दुनिया में सर्वशक्तिमान अल्लाह की सबसे बड़ी नेमत मानव-जाति पर अगर कोई है, तो वह क़ुरआन मजीद का अवतरण है। सभी नेमतों से बढ़कर यह नेमत है, क्योंकि रिज़्क़ (आजीविका) और उसके जितने साधन हैं, जैसे यह हवा, पानी, ग़ल्ला और इसी तरह आजीविका के अन्य साधन, जिनसे इन्सान अपने लिए रोज़ी कमाता है, मकान बनाता है, कपड़े प्राप्त करता है–ये सारी चीज़ें भी यद्यपि अल्लाह तआला के उपकार और उपहार ही हैं, लेकिन अल्लाह के ये उपकार और उपहार और ये नेमतें इन्सान के शरीर मात्र के लिए हैं। क़ुरआन मजीद वह नेमत है, जो इन्सान की आत्मा के लिए, उसके अख़लाक़ (चरित्र) के लिए और वास्तव में उसकी असल इन्सानियत के लिए सबसे बड़ी नेमत है। एक मुसलमान अल्लाह तआला का शुक्र इसी सूरत में सही तौर पर अदा कर सकता है, जबकि वह उसके दिये हुए रिज़्क़ (आजीविका) पर भी शुक्र अदा करे और उसकी दी हुई इस नेमत पर भी उसका शुक्र अदा करे, जो क़ुरआन की शक्ल में उसको दी गई है। उसका शुक्र अदा करने की यह सूरत नहीं है कि आप बस ज़ुबान से शुक्र अदा करें और कहें कि अल्लाह तेरा शुक्र है कि तूने क़ुरआन हमें दिया, बल्कि उसके शुक्र की सही सूरत यह है कि आप क़ुरआन को हिदायत का स्रोत समझें, दिल से इसको मार्गदर्शन का मूल आधार मानें और व्यावहारिक रूप से उसके मार्गदर्शन का लाभ उठायें।

कुरआन मजीद आपको अपनी व्यक्तिगत ज़िन्दगी के संबंध में हिदायत
ा है कि आप किस तरह से एक पवित्र जीवन व्यतीत करें। वह आपको
ा चीज़ों से मना करता है, जो आपके व्यक्तित्व के विकास के लिए
निकारक हैं। वह आपको वे बातें बताता है, जिन पर आप अमल
रें तो आपका व्यक्तित्व सही तौर पर विकसित होगा, और आप एक
च्छे इन्सान बन सकेंगे। वह आपके सामूहिक जीवन के संबंध में भी
स्तृत हिदायतें आपको देता है। आपका सामाजिक जीवन कैसा हो ?
ापका घरेलू जीवन कैसा हो ? आपकी सभ्यता और संस्कृति का नक़्शा
ा हो ? आपका राज्य किन सिद्धान्तों पर चले ? आपका क़ानून क्या
? आपकी सामाजिक ज़िन्दगी की व्यवस्था कैसी हो ? किन तरीक़ों
आप अपनी रोज़ी हासिल करें ? किन राहों में आप अपनी कमाई
सम्पत्ति ख़र्च करें और किन राहों में ख़र्च न करें ? आपका संबन्ध
पने ख़ुदा के साथ कैसा हो ? आपका मामला स्वयं अपने साथ कैसा
? आपका संबंध ख़ुदा के 'बन्दों' के साथ कैसा हो ? अपनी पत्नी
साथ, अपनी संतान के साथ, अपने माता-पिता के साथ, अपने
तेदारों के साथ, अपने समाज के लोगों के साथ और दुनिया के सभी
ानों के साथ, यहां तक कि पेड़-पौधों और अन्य जीवों के साथ
र ख़ुदा की दी हुई विभिन्न नेमतों के साथ आपका बर्ताव कैसा होना
हिए ? जीवन के इन सभी मामलों के लिए दिव्य क़ुरआन आपको
ष्ट हिदायतें देता है। एक मुसलमान का काम यह है कि वह क़ुरआन
मार्गदर्शन का वास्तविक स्रोत माने, रहनुमाई के लिए उसी की तरफ़
टे। उन आदेशों और हिदायतों एवं सिद्धान्तों को सही माने जो क़ुरआन
रहा है और उनके खिलाफ़ जो चीज़ भी हो, उसको रद्द कर दे, चाहे
कहीं से आ रही हो। अगर किसी व्यक्ति ने रमज़ान-उल-मुबारक

के इस ज़माने में कुरआन को इस नज़र से देखा और समझा है औ
कोशिश की है कि उसकी शिक्षा और हिदायत को ज़्यादा-से-ज़्याद
अपने आचरण और चरित्र में ग्रहण करे, तो उसने वास्तव में इस नेम
पर अल्लाह का सही शुक्र अदा किया है। वह वास्तव में इस पर मुबारकबा
के लायक़ है कि पवित्र माह रमज़ान का एक हक़ जो उस पर था
उसे उसने ठीक-ठीक अदा कर दिया।

रमज़ान के मुबारक महीने के रोज़ों का दूसरा मक़सद जिसके लि
वे आप पर अनिवार्य किए गए हैं, यह है कि आप में तक़्वा और परहेज़गार
पैदा हो। आप अगर रोज़े की हक़ीक़त पर विचार करें तो आपको मालू
होगा कि तक़्वा और परहेज़गारी पैदा करने के लिए इससे अधिक उपयोग
और कोई चीज़ नहीं हो सकती।

तक़्वा (परहेज़गारी) क्या चीज़ है? तक़्वा और परहेज़गारी यह
कि आदमी ख़ुदा की अवज्ञा से बचे और उसकी आज्ञा का पालन करे
रोज़ा लगातार एक महीने तक आपको इसी चीज़ का आभ्यास करात
है। जो चीज़ें आपके जीवन में सामान्यतः हलाल हैं, वे भी अल्ला
के आदेश से रोज़े में हराम हो जाती हैं और उस समय तक हराम रहत
हैं, जब तक अल्लाह ही के आदेश से वे हलाल न हो जाएं। पान
जैसी चीज़ जो हर हाल में हलाल और पवित्र है, रोज़े में जब अल्ला
आदेश देता है कि यह अब तुम्हारे लिए हराम है, तो आप इसकी ए
बून्द भी हलक़ से नहीं उतार सकते, चाहे प्यास से आपका हलक़ सूख
ही क्यों न लगे। परन्तु जब अल्लाह पीने की इजाज़त दे देता है, त
उस समय आप उसकी ओर इस तरह लपकते हैं, मानो किसी ने आपक
बांध रखा था और आप अभी खोले गये हैं। एक महीने तक प्रतिदि

बांधने और खोलने का यह अमल इसलिए किया जाता है कि आप अल्लाह की पूरी-पूरी बन्दगी और आज्ञा पालन के लिए तैयार हो जायें। जिस-जिस चीज़ से वह आपको रोकता है, उससे रुकने की और जिस-जिस चीज़ का वह आपको हुक्म देता है उसे पूरा करने का आपको अभ्यास हो जाए। आप अपने मन और इच्छाओं पर इतना क़ाबू पा लें कि वे अपनी अनुचित मांगें अल्लाह के क़ानून के ख़िलाफ़ आप से न मनवा सकें। यह उद्देश्य है, जिसके लिए रोज़े आप पर अनिवार्य किये गए हैं।

अगर किसी व्यक्ति ने रमज़ान के महीने में रोज़े की इस कैफ़ियत को अपने अन्दर पैदा किया है, तो वह वास्तव में मुबारकबाद का हक़दार है और इससे ज़्यादा मुबारकबाद का हक़दार वह व्यक्ति है, जो महीने भर के इस प्रशिक्षण और तर्बियत के बाद ईद की पहली घड़ी ही में उसे अपने अन्दर से उगल कर फेंक न दे, बल्कि शेष ग्यारह महीनों में भी उसके प्रभाव से लाभ उठाता रहे। आप ग़ौर कीजिए कि अगर एक व्यक्ति अच्छा-से-अच्छा भोजन करे, जो मनुष्य के लिए अत्यन्त पौष्टिक हो, लेकिन खाने के तुरन्त बाद हलक़ में उंगली डालकर उसको फ़ौरन उगल दे, तो उस भोजन का कोई फ़ायदा उसे नहीं मिलेगा, क्योंकि उसने हज़्म होने और ख़ून बनाने का उसे कोई मौक़ा ही न दिया। इसके विपरीत यदि एक व्यक्ति खाना खाकर उसे हज़्म करे और उससे ख़ून बनकर उसके शरीर में दौड़े, तो यह खाने का वास्तविक लाभ है, जो उसने प्राप्त किया, निम्न कोटि के पौष्टिक भोजन करके उसे शरीर का अंग बनाना, इससे बेहतर है कि बेहतरीन भोजन करने के बाद उलटी कर दी जाए। ऐसा ही मामला रमज़ान के रोज़ों का भी है। उनका वास्तविक लाभ आप इसी तरह उठा सकते हैं कि एक महीने तक जो नैतिक प्रशिक्षण

धार्मिक प्रतीकों के प्रति हमारा व्यवहार

हमारे अन्दर दुर्भाग्यवश एक बहुत बड़ी संख्या ऐसे लोगों की मौजूद है, जो रमज़ान के ज़माने में भी अल्लाह की ओर नहीं झुकते। रमज़ान आता है और गुज़र जाता है, लेकिन उनके घरों में यह महसूस तक नहीं होता कि यहां कुछ मुसलमान बसते हैं, जिनके लिए यह महीना कोई विशेष अर्थ रखता है। रोज़े रखना तो दूर, उसका आदर करने की तौफ़ीक़ भी उनको नसीब नहीं होती । रमज़ान के दिनों में भी वे उसी तरह इत्मीनान से खाते और पीते रहते हैं, जैसे कोई ईसाई, हिन्दू या सिख खाता-पीता है। वास्तविकता यह है कि जो लोग यह रवैया अपनाते हैं, उनका उदाहरण उस बंजर ज़मीन का-सा है, जिसके अन्दर बारिश का मौसम आने पर भी, जबकि चारों ओर हरियाली फैली होती है और खेतियां फूलती-फलती है, घास का एक तिनका तक पैदा नहीं होता। बारिश का ज़माना जिस तरह ज़मीन के लिए पैदावार का मौसम है, ठीक उसी तरह रमज़ान का पवित्र महीना इस्लाम की आत्मा के लिए विकास का मौसम है। अगर अल्लाह ने रोज़े का आदेश इस रूप में दिया होता कि मुसमलानों में से प्रत्येक व्यक्ति जब चाहे रोज़े रखकर तीस रोज़ों की गिनती पूरी कर लिया करे, तो हमारे धार्मिक जीवन में यह मौसम की-सी कैफ़ियत कभी पैदा नहीं हो सकती थी। लेकिन हिकमत वाले ख़ुदा ने आदेश इस रूप में दिया है कि सभी मुसलमान एक ही महीने में एक साथ रोज़े रखें। इस चीज़ ने मौसम की-सी कैफ़ियत पैदा कर दी। मौसम जब आता है तो उच्च कोटि की उपजाऊ ज़मीन की बात तो छोड़िए, जिस ज़मीन में ज़रा भी उगाने की शक्ति होती है,

उसके अन्दर से भी सब्ज़ी की कोंपलें फूटने लगती हैं, क्योंकि मौस
की बरकत यही है कि थोड़ी-सी उपज-शक्ति रखने वाली ज़मीन
इसके लाभ से वंचित नहीं रहती और जो ज़मीन मौसम आने पर
एक कोंपल तक न निकाले उसकी यह कैफ़ियत इस बात का स्पष्ट संके
होता है कि वह उपज-शक्ति से बिलकुल ख़ाली है। इसी तरह रमज़ा
एक ऐसा मौसम है कि जिस मुसलमान के अन्दर ईमान की थोड़ी-
मात्रा और इस्लाम का कोई कण भर जज़्बा भी मौजूद हो, वह ग्यार
महीने चाहे कैसा ही बेहिस क्यों न रहा हो, इस महीने के आते
उसके अन्दर का सोया हुआ ईमान करवटें लेने लगता है । एक मही
तक सभी मुसलमानों का एक ही समय सेहरी के लिए उठना, सबव
एक साथ दिन भर रोज़े रखना, एक ही वक़्त में सबका इफ़्तार कर
और रातों को जगह-जगह तरावीह पढ़ना। मुसलमानों की बस्तियों
एक ज़बरदस्त सामूहिक माहौल पैदा कर देता है, जिसकी बरकत
मस्जिदें भर जाती हैं। हर तरफ़ कुरआन की तिलावत होने लगती है
वे लोग भी नमाज़ें पढ़ने लगते हैं, जो दूसरे दिनों में नमाज़ के पाब
नहीं होते और वे लोग भी रोज़े रखने लगते हैं जिनके अन्दर दूसरे दि
में धर्म के प्रति कोई विशेष लगाव नहीं पाया जाता। इस माहौल
भी अगर कोई व्यक्ति बिल्कुल अप्रभावित रहता है, ख़ुदा की तर
झुकने का कोई भाव यदि उसके दिल में पैदा नहीं होता, नमाज़, रो
और कुरआन की तिलावत (कुरआन-पाठ) के लिए कोई रुचि उस
दिल में नहीं उभरती, तो इसके साफ़ मायने ये हैं कि उसका दिल ईम
के जज़्बे से बिल्कुल ख़ाली है। इस्लाम से उसका कोई रिश्ता बा
नहीं रहा है। ख़ुदा और उसके दीन (धर्म) के साथ और मुसलमान क़ौ
के साथ जितने सम्बन्ध हो सकते थे, उन सबको उसने काट फेंका

इसके बाद आप क्या भरोसा कर सकते हैं कि जो आदमी मुसलमानों के अन्दर पैदा होकर, मुसलमान क़ौम में आंखें खोलकर और मुसलमान-समाज का एक अंग होकर, उस क़ौम के धर्म और जीवन-व्यवस्था से ही अपने पवित्रतम सम्बन्धों और लगावों को इस तरह काट सकता है, वह कल इस क़ौम के साथ कोई ग़द्दारी और विश्वासघात न कर बैठेगा, स्पष्ट बात है कि वह अपने मन की इच्छाओं की बन्दगी में ही तो इस तरह का रवैया अपना रहा है। सवाल यह है कि जब उसकी इच्छायें उससे ये कुछ करवा सकती हैं, तो कल यही इच्छायें उससे क्या कुछ नहीं करवा सकेंगी ?

सज्जनो! हमें बहुत गंभीरता पूर्वक विचार करना चाहिए कि यह परिस्थिति हमारे यहां आख़िर क्यों पैदा हुई है? यदि कुछ आदमी ही इसमें लिप्त हैं, तो उसे नज़रअंदाज़ किया जा सकता था। मगर यहां तो हज़ारों लाखों आदमी हमारे अन्दर ऐसे मौजूद हैं, जो खुल्लम-खुल्ला और गर्व से रमज़ान में खाते-पीते रहते हैं और उल्टा रोज़ेदारों को शर्मिन्दा करते हैं।

वस्तुतः यह बड़ी चिन्ताजनक बात है और हमें इसके कारणों को समझने की कोशिश करनी चाहिए। ऐसी परिस्थिति वास्तव में इस वजह से पैदा हुई है कि हमने एक ज़माने से इस बात की परवाह करनी छोड़ दी है कि हमारे अन्दर जो सबसे बड़ा सुधार अल्लाह और उसके पैग़म्बर और उसकी किताब ने किया था, वह हमारे समाज में बाक़ी रहता है या नष्ट हो जाता है। हमें अपनी क़ौम की दुनिया बनाने की तो बड़ी चिन्ता रही है और इसके लिए हम बहुत प्रयत्नशील रहे हैं। परन्तु उस महान् नैतिक और आत्मिक सुधार और उस ज़बरदस्त धार्मिक व्यवस्था को बनाये रखने की कोई चिन्ता हमें नहीं रही, जिस पर हमारी क़ौम

के समाज को क़ायम किया गया था, बल्कि इसके विपरीत हमारे यह
तो बड़े पैमाने पर शिक्षा-दीक्षा और क़ानून और नियम की वह व्यवस्थ
काम करती रही है, जो इस ढांचे को ध्वस्त करने वाली है। इसी व
परिणाम हम यह देख रहे हैं कि इस्लाम की महानतम पवित्र चीज़ों वे
पामाल होने की हमारे प्रभावशाली वर्ग उतनी भी परवाह नहीं करते
जितनी अपनी पतलून की शिकन ख़राब हो जाने की करते हैं।

धरती में सुधार के बाद बिगाड़ पैदा न करो

सज्जनो ! इन्सान का सुधार एक बड़ा मुश्किल काम है, लेकिन इसव
बिगाड़ना कोई मुश्किल काम नहीं है। सुधार करना हो तो वर्षों की मेहनत
और लगातार कोशिशों से होता है, बिगाड़ना हो तो इसके लिए को
ख़ास मेहनत और कोशिश की आवश्यकता नहीं होती। कभी-कभी
सुधार करने के प्रयास की लापरवाही ही इसके लिए काफ़ी हो जा
है। आप एक बच्चे ही का उदाहरण ले लीजिए। उसको आप ए
अच्छा और पवित्रात्मा इंसान बनाना चाहें तो आपको बरसों अपनी ज
खपानी पड़ेगी, तब कहीं उसके ज़ेहन और आदतों और अच्छे स्वभा
को आप संवार सकेंगे। लेकिन यदि आप चाहें कि वह बिगड़े तो इस
लिए किसी ख़ास कोशिश की आवश्यकता नहीं, सिर्फ़ लगाम ढील
छोड़ देना काफ़ी है। समाज में हर तरह के बुरी आदत वाले लोगों
साथ चल-फिर कर वह ख़ुद बिगड़ जाएगा। मेहनत और कोशिश व
ज़रूरत केवल उन्नति के लिए होती है, न कि अवनति के लिए। अ
किसी गाड़ी को अगर ऊंचाई पर ले जाना चाहें, तो पूरी शक्ति ख़
किए बिना वह ऊपर न चढ़ सकेगी। नीचे की ओर जाना चाहें तो केव
ब्रेक ढीला छोड़ दीजिए, गाड़ी ख़ुद लुढ़केगी और जहां तक ढलान मिले

लुढ़कती चली जाएगी। ऐसा ही मामला मानव-समाज का है। किसी समाज को सुधार करके एक उच्चकोटि के सिद्धांत और व्यवहार की व्यवस्था का पाबन्द बनाना बड़ा मुश्किल काम है, जिसके लिए सदियों की कोशिशों की आवश्यकता होती है । परन्तु इन कोशिशों के फलों और परिणामों को नष्ट करने के लिए केवल इतनी बात भी काफ़ी हो सकती है कि आप उनको क़ायम और बरक़रार रखने की कोशिश छोड़ दें और जो बिगाड़ भी समाज में फैलता नज़र आए उसकी परवाह न करें। मुसलमानों में जो ख़ूबियां पैदा हुईं वे कुछ यूं ही संयोगवश नहीं पैदा हो गईं। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) और आपके साथी और उनके बाद क़ौम के सदाचारियों और परहेज़गार लोगों, विद्वानों और धर्म-शास्त्रियों ने सदियों पसीना बहाकर और जान खपाकर करोड़ों इंसानों को कुफ्र और शिर्क की गुमराहियों से निकाला, नैतिकता की हीन अवस्था से ऊपर उठाया, अंधविश्वासों और अज्ञानकाल के रस्म-रिवाजों को मिटाया, एक ख़ुदा की बन्दगी के लिए उनको तैयार किया, आख़िरत की जवाबदेही का विश्वास उनके दिलों में बिठाया और उच्चकोटि के शिष्टाचार की शिक्षा-दीक्षा देकर एक विशेष प्रकार का चरित्र उनके अन्दर पैदा किया। नमाज़ और रोज़े, हज और ज़कात जैसी पवित्र इबादतों को रिवाज दिया और इस्लामी सभ्यता और संस्कृति की व्यवस्था का एक मज़बूत सांचा तैयार कर दिया, जिसके कारण मुसलमान उन ख़ूबियों से सुसज्जित हुए, जो दूसरों के लिए क़ाबिले रश्क थीं। यह जो कुछ सैकड़ों सालों की मेहनतों और लगातार कोशिशों से बना है, उसको हम बर्बाद कर देना चाहें, तो आसानी से कर सकते हैं। लेकिन उसे फिर बनाना चाहें, तो फिर इसके लिए सदियों की ज़रूरत होगी।

यह हमारा बहुत बड़ा दुर्भाग्य है कि हमारे पूर्वजों ने सैकड़ों वर्ष की

मेहनतों से हमारे अन्दर जो सुधार किया था, उसको हमने पिछली एव
सदी के अन्दर बुरी तरह बर्बाद किया है। पहले अंग्रेज़ों की ग़ुलामी
के समय में वह बहुत कुछ बर्बाद हुआ और अब उनकी ग़ुलामी ख़त्म
हो जाने के बाद ख़ुद अपने शासकों के दौर में हम उसको पहले से
भी अधिक बर्बाद कर रहे हैं। यह वही ग़लती है, जिस पर क़ुरआन
मजीद में अनेक जगहों पर सावधान कराया गया है–

> "धरती पर सुधार हो जाने के बाद उसमें बिगाड़ पैदा न करो।" –7:56

धरती पर बसने वाले इन्सानों की ज़िन्दगी में जितना भी सुधार हुआ है, नबियों (अलै०) और मानव-जाति के सदाचारी मनुष्यों की हज़ारों वर्षों की कोशिशों से हुआ है। एक-एक बुराई को दूर करने और एक-एक भलाई को क़ायम करने में ख़ुदा के सदाचारी बन्दों को सैकड़ों वर्ष मेहनत करनी पड़ी है, तब जाकर दुनिया में कुछ विश्वव्यापी नैतिक नियमों पर मानव-सभ्यता का निर्माण हुआ है। इस निर्माण को बर्बाद तो आसानी से किया जा सकता है। लेकिन फिर से उसको बना देना कोई बच्चों का खेल नहीं है। एक मामूली उदाहरण लीजिए, सिर्फ़ यह बात कि औरत और मर्द का संबंध निकाह के सिवा किसी और परिस्थिति में न हो। इन्सान को इसका क़ायल करना और उसका अभ्यस्त बनाना और समाज में उसको एक स्वीकृत नियम (क़ानून) की हैसियत से प्रचलित कर देना इतना कठिन काम था कि नबियों (अलै०) और सदाचारी मनुष्यों को इसके लिए हज़ारों वर्ष तक कोशिश करनी पड़ी होगी, तब कहीं दुनिया में यह एक सुधार लागू किया जा सका होगा, क्योंकि इन्सान में यौन-अराजकता की ओर इतना ज़बरदस्त रुझान मौजूद है कि उसे एक नैतिक नियम का पाबंद बना देना कोई आसान काम नहीं है। इस

सुधार को नष्ट कर देने के लिए किसी बड़ी मेहनत की ज़रूरत नहीं। औरतों और मर्दों में आज़ादाना मेल-जोल की राहें खोल दीजिए और परिवार नियोजन के साधनों को आम लोगों तक पहुंचा दीजिए। यौन अराजकता का दैत्य, जिसे मुश्किल से बांधा गया था, एक बार खुल जाने के बाद देखते-देखते उन सारे सुधारों पर पानी फेर देगा, जो हज़ारों वर्षों की कोशिशों से हुए थे। लेकिन उसके विनाशकारी परिणाम सामने आने के बाद, जिस तरह कि आज वह पश्चिमी समाज के सामने अत्यन्त भयानक रूप में आ रहे हैं, आप अगर चाहें कि फिर इस दैत्य को क़ैद कर दें, तो यह कोई आसान काम न होगा। इसके लिए फिर सैकड़ों वर्ष ही की मेहनतों की आवश्यकता होगी। इसीलिए कुरआन मजीद मानवता के लुटेरों को सावधान करता है कि ज़मीन में जो सुधार बड़ी मुश्किलों से हुआ है, उसको तुम अपनी मूर्खता से बरबाद न करो।

इसी एक उदाहरण पर आप अनुमान कर लीजिए कि जिस भव्य भवन का नाम इस्लामी सभ्यता और संस्कृति है, इसका निर्माण किस कठिनाई से हुआ होगा। कितनी अज्ञानताओं और पथभ्रष्टताओं को मिटाकर और कितनी बुराइयों का निवारण करके इसके लिए ज़मीन साफ़ की गई होगी। कितनी जीतोड़ कोशिशों से सही विश्वासों और विचारों को लोगों के ज़ेहनों में बिठाया गया होगा, क्या कुछ मेहनतें नैतिक सीमाओं और नियमों को समाज में व्यवहारिक रुप से क़ायम करने पर लगी होंगी। फिर इस पूरी इमारत को सहारा देने के लिए इस्लामी जीवन-व्यवस्था के ये पांच स्तम्भ–शहादत (गवाही), एकेश्वरवाद, नमाज़, रोज़ा और हज–मज़बूती के साथ जमाए गए होंगे। यह जो कुछ बना है, हमारे पूर्वजों के असीम प्रयासों से बना है और यह महान पूंजी हमें विरासत के रूप में मुफ़्त में मिल गयी है। यदि हम इसका विकास नहीं कर

सकते, तो कम-से-कम इसे बरबाद तो नहीं करना चाहिए। हमारी शिक्षा
और प्रशिक्षण-व्यवस्था, हमारा साहित्य, हमारी सभ्यता और संस्कृ
की धारणा और कुल मिलाकर क़ानून और प्रबंध-व्यवस्था और आजीविक
और सामाजिकता की पूरी व्यवस्था जिस रफ़्तार से इस पूंजी का अनाद
करने वाले और उसको बरबाद करने वाले लोगों को दिन-प्रतिदि
अधिक-से-अधिक संख्या में पैदा कर रही है, इसको देखते हुए य
कहा जा सकता है कि वह दिन दूर नहीं जब हम इसको बिल्कुल खो
देंगे और यदि एक बार हमने उसे खो दिया तो पुनः उसे पा लेना को
आसान काम न होगा। ख़ुदा न करे कि वह समय आये और ख़ुद
करे कि उसके आने से पहले ही हम संभल जायें।